कमला नेहरू महिला महाविद्यालय ; भुबनेश्वर

हिंदी विभाग ; ई – पत्रिका

जय जगन्नाथ

हिंदी भारती

जून – 2018

संपादक मंडली

संपादक : डॉ. वेदुला रामालक्ष्मी

डॉ. मनोरमा मिश्रा

उप – संपादक : कु. प्रियंका प्रियदर्शिनी परिडा

कु. शुभश्री शताब्दी दास

संपादकीय

"हिंदी भारती" का जून अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है। "हिंदी भारती" के सभी पाठकों को -

"जगन्नाथ रथयात्रा की हार्दिक शुभ कामनायें"

"हिंदी भारती" के इस अंक में विभाग की छात्राओं ने जीवन को अपनी दृष्टि से देखने, समझने एवं अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है। हमारी ई - पत्रिका ने हमेशा प्रयास किया है कि वह हर अंक के साथ आगे बढ़े, अतः इस अंक में भी कुछ नवीनता है। पत्रिका के इस अंक में भी विशिष्ठ पाठकों एवं विद्वद्जनों के संदेशों और सुझावों को "आपकी बात" शीर्षक के अंतर्गत शामिल किया है। "आपकी बात" हमारे लिये अखण्ड प्रेरणा का स्रोत है, साथ ही इस अंक से "एक मुलाकात" शीर्षक के अंतर्गत विशिष्ठ साहित्यकारों और साहित्य प्रेमियों के साक्षात्कार को प्रकाशित करने का नवीन प्रयास किया है।

हम आशा करते हैं कि हर अंक की तरह आप इस अंक को भी स्वीकार करते हुए भविष्य में हमारा मार्गदर्शन करते रहेंगे और आपका आदर और स्नेह हमें इसी तरह मिलता रहेगा। अब हमारी पत्रिका को आप हमारे महाविद्यालय के वेब साइट www.knwcbbsr.com पर भी पढ़ सकते हैं।

संपादक : डॉ. वेदुला रामालक्ष्मी

डॉ. मनोरमा मिश्रा

अनुक्रमणिका

क्र सं.	शीर्षक	विधा	नाम	पृ. सं.
1.	जगन्नाथ रथयात्रा	लेख	संगृहित	5
2.	एक मुलाकात	साक्षात्कार	विभाग की छात्रायें	12
3.	मूल्य विघटन : साहित्य और भाषा का संदर्भ	लेख	प्रोफेसर पूरन चंद टंडन	17
4.	शीतल षष्टि	लेख	लिज़ा मिश्र	25
5.	विवाह,,, बंधन???	लेख	पिंकी सिंह	27
6.	कहाँ हैं हम??	कविता	पिंकी सिंह	28
7.	मोहन राकेश	लेखक परिचय	लिज़ा मिश्र	29
8.	ईद	लेख	कादम्बनी पण्डा	33
9.	जीवन में महत्वपूर्ण क्या है?	लघु कथा (संगृहित)	शरीफा शरवारी	34
10.	पिता	विचार	सोनिया नायक	36
11.	पावान गंगा	कविता	सोनाली सेठी	37
12.	अहंकार	लेख	सोनाली राउत	38
13.	आपकी बात			39
14.	मन्नू भंडारी से साक्षात्कार (भाग-1, भाग-2)	यू ट्यूब लिंक		42
15.	यादों के गलियारों से	चित्र स्मृतियाँ		43

जगन्नाथ रथयात्रा

भारत भर में मनाए जाने वाले महोत्सवों में जगन्नाथपुरी की रथयात्रा सबसे महत्वपूर्ण है। यह परंपरागत रथयात्रा न सिर्फ हिन्दुस्तान, बल्कि विदेशी श्रद्धालुओं के भी आकर्षण का केंद्र है। जगन्नाथ की रथयात्रा का पुण्य सौ यज्ञों के बराबर माना गया है।

पुरी का जगन्नाथ मंदिर भक्तों की आस्था केंद्र है, जहां वर्षभर श्रद्धालुओं की भीड़ लगी रहती है। जो अपनी बेहतरीन नक्काशी व भव्यता लिए प्रसिद्ध है। यहां रथोत्सव के वक्त इसकी छटा निराली होती है, जहां प्रभु जगन्नाथ, बलभद्र को अपनी जन्मभूमि, बहन सुभद्रा को मायके का मोह यहां खींच लाता है। रथयात्रा के दौरान भक्तों को सीधे प्रतिमाओं तक पहुंचने का मौका भी मिलता है।

यह दस दिवसीय महोत्सव होता है। इस दस दिवसीय महोत्सव की तैयारी का श्रीगणेश अक्षय तृतीया को जगन्नाथ, बलराम और सुभद्रा के रथों के निर्माण से होता है और कुछ धार्मिक अनुष्ठान भी महीने भर किए जाते हैं।

तीनों रथ, जगन्नाथ, बलराम और सुभद्रा के रथ प्रति वर्ष नए बनाये जाते हैं। इन तीनों रथ को सदियों से एक ही प्रकार एक ही रंग में सजाया जाता है। इनकी सजावट वहीं बडदांड में ही होती है और इनकी लाल रंग का ध्वजा और चमकते हुए पीले, नील, काले रंग को देखते ही आप प्रभु की ओर मोहित हो जायेंगे। इनकी सजावट मंदिर के मुख्य द्वार (सिंह द्वार) जो की मदिर की पूर्व दिशा में है, उस जगह किया जाता है।

1. नंदिघोष रथ

नंदिघोष रथ भगवान श्री जगन्नाथ के रथ का नाम है। इसे गरुड़ध्वज और कपिध्वज भी कहा जाता है। इसमें भगवान का साथ मदनमोहन देते हैं।

नंदिघोष रथ

कुल लकड़ी के टुकड़े - 832

ऊंचाई - 44′ 2″

लम्बाई और चौड़ाई - 34′ 6″ x 34′ 6″

कपड़ों के रंग - लाल और पीले रंग का कपडा

रक्षक - गरुड़

सारथी का नाम - दारुक

झंडा(ध्वज) - त्रैलोक्यमोहिनी

घोड़े - शंखा, बलाहख, सुस्वेता, हरिदाश्व

रस्सी - शंखचूड़

नौ देवताओं कि अध्यक्षता - वराह, गोबर्धन, कृष्ण (गोपी कृष्ण), नुर्सिंह, राम, नारायण, त्रिविक्रम, हनुमान, रूद्र

2. तालध्वज रथ

भगवान बलभद्र के रथ का नाम तालध्वज, नंगलध्वज है। इसमें उनका साथ रामकृष्ण देते हैं।

तालध्वज रथ

कुल चक्के - 14

कुल लकड़ी के टुकड़े - 763

ऊंचाई - 43′ 3″

लम्बाई और चौड़ाई - 33′ x 33′

कपड़ों के रंग - लाल, नीला-हरा रंग का कपड़ा

रक्षक - बासुदेव

सारथी का नाम - मातली

झंडा(ध्वज) - उन्नानी

घोड़े - तीव्र, घोरा, दीर्गश्रम, स्वर्णनाभ

रस्सी - वासुकी नाग

नौ देवताओं की अध्यक्षता - गणेश, कार्तिकेय, सर्वमंगला, प्रलाम्बरी, हतायुध, मृत्युन्जय, नतमवर, मुक्तेश्वर, शेषदेव

3. दर्पदलन रथ

सुभद्रा के रथ का नाम है दर्पदलन, देवदलन, पद्मध्वज है। रथ में देवी सुभद्रा का साथ सुदर्शन देता हैं।

दर्पदलन रथ

कुल चक्के - 12

कुल लकड़ी के टुकड़े - 593

ऊंचाई - 42′ 3″

लम्बाई और चौड़ाई - 31′ 6″ x 31′ 6″

कपड़ों के रंग - लाल, काले रंग का कपड़ा

रक्षक - जयदुर्गा

सारथी का नाम - अर्जुन

झंडा(ध्वज) - नादम्बिका

घोड़े - रोचिका, मोचिका, जीता, अपराजिता

रस्सी - स्वर्णचुड़ा

नौ देवताओं कि अध्यक्षता - चंडी, चामुंडा, उग्रतारा, वनदुर्गा, शुलिदुर्गा, वाराही, श्यामकाली, मंगला, विमला

प्रत्येक वर्ष आषाढ़ मास में शुक्ल द्वितीया को जगन्नाथ की रथयात्रा होती है। यह एक बड़ा समारोह है, जिसमें भारत के विभिन्न भागों से श्रद्धालु आकर सहभागी बनते हैं। दस दिन तक मनाए जाने वाले इस पर्व/यात्रा को 'गुण्डीचा यात्रा' भी कहा जाता है। माना जाता है कि इस रथयात्रा में सहयोग से मोक्ष प्राप्त होता है, अत: सभी कुछ पल के लिए रथ खींचने को आतुर रहते हैं। जगन्नाथ जी की यह रथयात्रा गुंडीचा मंदिर पहुंचकर संपन्न होती है। जगन्नाथपुरी का वर्णन स्कंद पुराण, नारद पुराण, पद्म पुराण और ब्रह्म पुराण में मिलता है।

पूर्व भारतीय उड़ीसा राज्य का पुरी क्षेत्र जिसे पुरुषोत्तम पुरी, शंख क्षेत्र, श्रीक्षेत्र के नाम से भी जाना जाता है, भगवान श्री जगन्नाथ जी की मुख्य लीला-भूमि है। उत्कल प्रदेश के प्रधान देवता श्री जगन्नाथ जी ही माने जाते हैं। यहाँ के वैष्णव धर्म की मान्यता है कि राधा और श्रीकृष्ण की युगल मूर्ति के प्रतीक स्वयं श्री जगन्नाथ जी हैं। इसी प्रतीक के रूप श्री जगन्नाथ से सम्पूर्ण जगत का उद्भव हुआ है। श्री जगन्नाथ जी पूर्ण परात्पर भगवान है और श्रीकृष्ण उनकी कला का एक रूप है। ऐसी मान्यता श्री चैतन्य महाप्रभु के शिष्य पंच सखाओं की है।

पूर्ण परात्पर भगवान श्री जगन्नाथ जी की रथयात्रा आषाढ़ शुक्ल द्वितीया को जगन्नाथपुरी में आरम्भ होती है। यह रथयात्रा पुरी का प्रधान पर्व भी है। इसमें भाग लेने के लिए, इसके दर्शन लाभ के लिए हज़ारों, लाखों की संख्या में बाल, वृद्ध, युवा, नारी देश के सुदूर प्रांतों से आते हैं।

रथ यात्रा का प्रारंभ

कहते हैं कि राजा इन्द्रद्युम्न, जो सपरिवार नीलांचल सागर (उड़ीसा) के पास रहते थे, को समुद्र में एक विशालकाय काष्ठ दिखा। राजा के उससे विष्णु मूर्ति का निर्माण कराने का निश्चय करते ही वृद्ध बढ़ई के रूप में विश्वकर्मा जी स्वयं प्रस्तुत हो गए। उन्होंने मूर्ति बनाने के लिए एक शर्त रखी कि मैं जिस घर में मूर्ति बनाऊँगा उसमें मूर्ति के पूर्णरूपेण बन जाने तक कोई न आए। राजा ने इसे मान लिया और विश्वकर्मा मूर्ति निर्माण में लग गए। राजा के परिवारजनों को यह ज्ञात न था कि वह वृद्ध बढ़ई कौन है। कई दिनों तक घर का द्वार बंद रहने पर महारानी ने सोचा कि बिना खाए-पिये वह बढ़ई कैसे काम कर सकेगा। अब तक वह जीवित भी होगा या मर गया होगा। महारानी ने महाराजा को अपनी सहज शंका से अवगत करवाया। महाराजा के द्वार खुलवाने पर वह वृद्ध बढ़ई कहीं नहीं मिला लेकिन उसके द्वारा अर्द्धनिर्मित श्री जगन्नाथ, सुभद्रा तथा बलराम की काष्ठ मूर्तियाँ वहाँ पर मिली।

महाराजा और महारानी दुःखी हो उठे। लेकिन उसी क्षण दोनों ने आकाशवाणी सुनी, 'व्यर्थ दुःखी मत हो, हम इसी रूप में रहना चाहते हैं मूर्तियों को द्रव्य आदि से पवित्र कर स्थापित करवा दो।' आज भी वे अपूर्ण और अस्पष्ट मूर्तियाँ पुरुषोत्तम पुरी की रथयात्रा और मन्दिर में सुशोभित व प्रतिष्ठित हैं। रथयात्रा माता सुभद्रा के द्वारिका भ्रमण की इच्छा पूर्ण करने के उद्देश्य से श्रीकृष्ण व बलराम ने अलग रथों में बैठकर करवाई थी। माता सुभद्रा की नगर भ्रमण की स्मृति में यह रथयात्रा पुरी में हर वर्ष होती है।

पृष्ठभूमि में स्थित दर्शन और इतिहास

कल्पना और किंवदंतियों में जगन्नाथ पुरी का इतिहास अनूठा है। आज भी रथयात्रा में जगन्नाथ जी को दशावतारों के रूप में पूजा जाता है, उनमें विष्णु, कृष्ण और वामन भी हैं और बुद्ध भी। अनेक कथाओं और विश्वासों और अनुमानों से यह सिद्ध होता है कि भगवान जगन्नाथ विभिन्न धर्मो, मतों और विश्वासों का अद्भुत समन्वय है। जगन्नाथ मन्दिर में पूजा पाठ, दैनिक आचार-व्यवहार, रीति-नीति और व्यवस्थाओं को शैव, वैष्णव, बौद्ध, जैन यहाँ तक तांत्रिकों ने भी प्रभावित किया है। भुवनेश्वर के भास्करेश्वर मन्दिर में अशोक स्तम्भ को शिव लिंग का रूप देने की कोशिश की गई है। इसी प्रकार भुवनेश्वर के ही मुक्तेश्वर और सिद्धेश्वर मन्दिर की दीवारों में शिव मूर्तियों के साथ राम, कृष्ण और अन्य देवताओं की मूर्तियाँ हैं। यहाँ जैन और बुद्ध की भी मूर्तियाँ हैं पुरी का जगन्नाथ मन्दिर तो धार्मिक सहिष्णुता और समन्वय का अद्भुत उदाहरण है। मन्दिर कि पीछे विमला देवी की मूर्ति है जहाँ पशुओं की बलि दी जाती है, वहीं मन्दिर की दीवारों में मिथुन मूर्तियों चौंकाने वाली है। यहाँ तांत्रिकों के प्रभाव के जीवंत साक्ष्य भी हैं। सांख्य दर्शन के अनुसार शरीर के २४ तत्वों के ऊपर आत्मा होती है। ये तत्व हैं- पंच महातत्व, पाँच तंत्र माताएँ, दस इन्द्रियों और मन के प्रतीक हैं। रथ का रूप श्रद्धा के रस से परिपूर्ण होता है। वह चलते समय शब्द करता है। उसमें धूप और अगरबत्ती की सुगंध होती है। इसे भक्तजनों का पवित्र स्पर्श प्राप्त होता है। रथ का निर्माण बुद्धि, चित्त और अहंकार से होती है। ऐसे रथ रूपी शरीर में आत्मा रूपी भगवान जगन्नाथ विराजमान होते हैं। इस प्रकार रथयात्रा शरीर और आत्मा के मेल की ओर संकेत करता है और आत्मदृष्टि बनाए रखने की प्रेरणा देती है। रथयात्रा के समय रथ का संचालन आत्मा युक्त शरीर करती है जो जीवन यात्रा का प्रतीक है। यद्यपि शरीर में आत्मा होती है तो भी वह स्वयं संचालित नहीं होती, बल्कि उस माया संचालित करती है। इसी प्रकार भगवान जगन्नाथ के विराजमान होने पर भी रथ स्वयं नहीं चलता बल्कि उसे खींचने के लिए लोक-शक्ति की आवश्यकता होती है।

सम्पूर्ण भारत में वर्षभर होने वाले प्रमुख पर्वों होली, दीपावली, दशहरा, रक्षा बंधन, ईद, क्रिसमस, वैशाखी की ही तरह पुरी का रथयात्रा का पर्व भी महत्त्वपूर्ण है। पुरी का प्रधान पर्व होते हुए भी यह रथयात्रा पर्व पूरे भारतवर्ष में लगभग सभी नगरों में श्रद्धा और प्रेम के साथ मनाया जाता है। जो लोग पुरी की रथयात्रा में नहीं सम्मिलित हो पाते वे अपने नगर की रथयात्रा में अवश्य शामिल होते हैं। रथयात्रा के इस महोत्सव में जो सांस्कृतिक और पौराणिक दृश्य उपस्थित होता है उसे प्राय: सभी देशवासी सौहार्द्र, भाई-चारे और एकता के परिप्रेक्ष्य में देखते हैं। जिस श्रद्धा और भक्ति से पुरी के मन्दिर में सभी लोग बैठकर एक साथ श्री जगन्नाथ जी का महाप्रसाद प्राप्त करते हैं उससे वसुधैव कुटुंबकम का महत्व स्वत: परिलक्षित होता है। उत्साहपूर्वक श्री जगन्नाथ जी का रथ खींचकर लोग अपने आपको धन्य समझते हैं। श्री जगन्नाथपुरी की यह रथयात्रा सांस्कृतिक एकता तथा सहज सौहार्द्र की एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में देखी जाती है।

स्नान पूर्णिमा

गजानन वेष

महाप्रसाद

नीलचक्र एवं पतितपावन बाना

एक मुलाकात

डॉ. शंकरलाल पुरोहित हिंदी भाषा, साहित्य, अनुवाद एवं हिंदी शिक्षण के क्षेत्र में एक शीर्ष हस्ताक्षर हैं। आपने ओड़ीशा जैसे अहिंदी क्षेत्र में शिक्षण, अनुवाद एवं प्रचार प्रसार के द्वारा हिंदी भाषा एवं साहित्य की सेवा की है। गोपीनाथ महंती जी द्वारा रचित 'परजा' उपन्यास के अनुवाद हेतु आपको केंद्र साहित्य अकादमी अनुवाद पुरस्कार एवं साथ ही आपके अनुवादों के लिये अनेक अन्य पुरस्कार तथा सम्मान प्राप्त हुये हैं। हमारे विभाग की लिज़ा, पिंकी, प्रियंका, सोनाली, सोनिया तथा कादम्बिनी ने आपसे एक मुलाकात के दौरान कई बातें की एवं अपना ज्ञानवर्धन किया। उस मुलाकात के कुछ अंश प्रस्तुत हैं -

प्रश्न - 1. आप शिक्षक हैं तो आप की शिक्षण यात्रा के बारे में कुछ बताइए?

डॉ. पुरोहित - मेरी शिक्षण यात्रा तब शुरु हुई जब में प्राइमरी स्कूल में पढ़ा रहा था। 1966 कटक हिन्दी विद्यालय में वहाँ एक अस्थायी अध्यापक था। केवल 36 लड़कों को पढ़ाता था। ये मेरी प्रारंभिक यात्रा है, इसके बाद मुझे टिटलागढ़ से लेक्चरर के लिए बुलावा आ गया। वहां दो साल भी नहीं रहा। फिर मैंने सरकारी नौकरी करली और बी. जे. बी. महाविद्यालय, भुबनेश्वर में आ गया। वहां से स्थानांतरित होकर राजेन्द्र कॉलेज बलांगीर गया। फिर मेरा स्थानांतरण कर दिया गया भुबनेश्वर हिंदी टीचर ट्रैनिंग कॉलेज, फिर वहां से स्थानांतरण हुआ विनायक आचार्य कॉलेज बरहमपुर, हिंदी ट्रैनिंग कॉलेज, रामादेवी कॉलेज, बी. जे. बी., से रेवेन्शा, फिर वहां से एक बार फिर स्थानांतरण हो गया बी. जे. बी. महाविद्यालय, भुबनेश्वर और वहीं से मैं वर्ष 1998 में अवकाश प्राप्त हुआ।

ये तो रही सरकारी नौकरियाँ, लेकिन शिक्षक के रूप में अभी भी पढ़ाता हूँ। कभी बनारस जाकर कभी बालेश्वर जाकर पढ़ाता हूँ, कभी बारिपदा और जहां कहीं बुलाते हैं जाकर पढ़ाता हूँ। लोग मुझे वर्णमाला सिखाने को कहें तो सिखाता हूँ, डी. लिट्. करवाने को कहे तो करवाता हूँ।

लेकिन शिक्षक के रूप में मेरी प्रतिष्ठा उतनी नहीं है जितनी अनुवादक के रूप में है। जब मुझे समय मिलता है कुछ न कुछ अनुवाद करता हूँ। समय चुरा चुरा के में अनुवाद करता हूँ। अब तक सैकड़ों किताबों का अनुवाद किया है।

प्रश्न - 2. आपका नाम अनुवाद के क्षेत्र में सम्मान के साथ लिया जाता है। कृपया अपने अनुवाद कार्य पर कुछ प्रकाश डालिये?

डॉ. पुरोहित - मैंने अनुवाद किया ये तो नहीं कहूंगा, लेकिन मुझे अनुवाद करना पड़ा। क्योंकि मुझे कहा गया कि ओड़िशा में क्या है? ओड़िया भाषा और साहित्य में क्या है, कोई नहीं जानता। पहले तो मैंने अनुवाद इसलिए किया कि ओड़िशा का नाम हिंदी भाषी क्षेत्र में हो, और दूसरा इसलिये कि लोगों का नाम हो। और इस तरह अनुवाद करते करते मेरा भी नाम हो गया। वो कहते हैं ना कि -
“बाँटनवारे को लगे ज्यों मेहंदी का रंग”

ज्ञानपीठ, साहित्य अकादमी, सरस्वती सम्मान प्राप्त विख्यात रचनाकारों की कृतियों का अनुवाद किया। पहले पहल मैं कई आलोचनाओं का शिकार बना। लोगों ने कहा मैं झूठन खाता हूँ, दोयम दर्जे का काम करता हूँ। पर जिन लोगों ने भी मेरी निंदा की, वे आज अनुवाद के क्षेत्र में जाने माने नाम हैं।

प्रश्न - 3. आपने 'परजा' का अनुवाद किया, 'परजा' एक आंचलिक उपन्यास है, तो उसकी भाषा उसकी कथावस्तु, और चरित्रों का अध्ययन करने के लिए आपको क्या करना पड़ा और कैसे उसका अनुवाद किया?

डॉ. पुरोहित - ‘परजा’ उस अर्थ में आँचलिक उपन्यास नहीं है जैसे कि आँचलिक उपन्यास लिखे जाते हैं। ‘परजा’ की कथावस्तु, पात्र, घटनायें आदि तो आँचलिक हैं, पर 'परजा' परजा भाषा में लिखा नहीं गया है। ये लिखा गया ओड़िया में, उसमें परजा का जीवन है, शैली है, परंतु भाषा परजा नहीं है। गोपी बाबू वहां रहें, अनुभव किया और उसको ओड़िया में लिखा। इसीलिए मैंने परजा का अनुवाद सहज भाव से किया, अगर वह उपन्यास परजा भाषा में होता तो मैं कभी अनुवाद नहीं कर पाता।

प्रश्न - 4. अनुवादक होने की प्रेरणा आपको कहाँ से मिली?

डॉ. पुरोहित - जैसा मैंने कहा कि मैंने अनुवाद इसलिए किया कि ओड़िशा का नाम हिंदी में हो, उसीमें से मुझे अनुवाद करने को प्रेरणा मिली। भारत वर्ष को एक करने में, भारत की दूरियां मिटाने में, सांस्कृतिक

संबंधों को दृढ़ करने में अनुवाद का बहुत महत्वपूर्ण योगदान है। इन्हीं दूरियों को पाटने के लिये अनुवाद किया जाता है, मैंने भी वही किया। कभी पुरस्कारों के पीछे नहीं भागा, बस अपना काम किया।

प्रश्न - 5. आपका पहला अनुवाद ?

डॉ. पुरोहित - रेवती कहानी का अनुवाद पहला अनुवाद कहा जा सकता है। मुझे फकीर मोहन सेनापती जी की कहानी रेवती से ही अनुवाद करने की प्रेरणा मिली।

प्रश्न - 6. काव्यनुवाद, गद्यानुवाद, कार्यालयीन अनुवाद में क्या अंतर है ?

डॉ. पुरोहित - कार्यालयीन अनुवाद औपचारिक होता है, उसमें लोच नहीं होता है। उसकी टेक्नोलोजी फिक्स है। इसमें स्वतंत्रता नहीं है। साहित्यिक अनुवाद जब करेंगे तो वह बंधनमुक्त है। कार्यालयीन अनुवाद कामकाज के लिए प्रयोग करते हैं, कश्मीर से कन्याकुमारी तक देश के लोगों को समझ में आती है, लेकिन साहित्यिक अनुवाद सारे देश में चलता है और साथ ही साहित्यिक अनुवाद भारत से बाहर भी चलता है।

प्रश्न - 7. काव्यनुवाद, गद्यानुवाद और कार्यालयीन अनुवाद में से कौन सा अनुवाद सहज है ?

डॉ. पुरोहित - काव्य की भाषा और जीवन की भाषा में अंतर है, कविता के अंदर जो गहराई है, आत्मीयता है, कार्यालयीन भाषा में वह नहीं है। गद्य की भाषा में भी वह नहीं है। हर विधा के अनुवाद की अपनी अलग अलग विषेशतायें होती हैं। उन्हें सरलता और कठिनता की कसौटी पर कसा नहीं जा सकता।

प्रश्न - 8. अगर हम अनुवादक बनना चाहे तो किन चीजों पर ध्यान देना जरूरी है?

डॉ. पुरोहित - You must fall in love with the topic/subject. उस विषय के साथ आपको गहराई से जुड़ना होगा, तभी आप अनुवाद कर सकते हैं। उदाहरण के लिये मैंने जयदेव की अष्टपदियों का अनुवाद तीन बार किया, पर सीताकांत बाबू को पसंद नहीं आया। पर जब अंततः अनुवाद पूर्ण हुआ तो सीताकांत बाबू ने कहा कि - "अष्टपदियों का ऐसा सहज और सुंदर अनुवाद मैंने अब तक नहीं देखा।" संश्लिष्ट अष्टपदियों का अनुवाद सफल हो पाया क्योंकि मुझे अष्टपदियाँ बहुत पसंद हैं। अनुवाद में कठिनाईयाँ आये तो भागो मत, सामना करो।

प्रश्न - 9. ओड़िशा एक अहिंदी भाषी क्षेत्र है, यहां आप हिंदी की विकास यात्रा को किस तरह देखते हैं?

डॉ. पुरोहित - हिन्दी के विकास में हिन्दी के प्रति लोगों के मन में काफी श्रद्धा है, सहानुभूति है, आदर है। ओड़िशा का साहित्य, संस्कृति हिन्दी में अनूदित होकर हिंदी पाठकों तक पहुँच रहा है तो हिन्दी को भी सम्मान मिलता है। इसलिए हिन्दी के प्रचार में कोई बाधा नहीं आती है। हिंदी विरोधी नारे नहीं लगते हैं। बड़े सहज भाव से सरल भाव से हिन्दी का प्रचार प्रसार चल रहा है।

प्रश्न - 10. अपने मौलिक सृजन के बारे में कुछ बताइय।

डॉ. पुरोहित - अपने मौलिक लेखन की बात करूँ तो, मैंने 5 जीवनियाँ लिखी है। महाप्रभु जगन्नाथ पर 'जय जगदीश हरे', 'यात्रा जगदीश' के साथ 'राम कथा - विविध आयाम' भी प्रकाशित हुई है। ओड़ीशा की संस्कृति पर आधारित पुस्तक 'ओड़िया संस्कृति के कुछ अध्याय' के नाम से प्रकाशन हेतु तैयार है।

प्रश्न - 11. आपके मार्ग दर्शन में आज आपके कई छात्र ओड़िशा एवं अन्य राज्य में आपकी शिक्षण परंपरा को आगे बढ़ा रहे हैं। इससे जुड़े आपके अनुभव बताइय?

डॉ. पुरोहित - मेरे कई विद्यार्थी पूरे भारत और विदेशों में भी हिंदी की शिक्षण परम्परा और हिंदी के प्रचार प्रसार को आगे बढ़ा रहें हैं। उन्होंने हिन्दी के विकास की दिशा में बहुत काम किया है। विजय मोहन्ती, डा. वेदुला रामालक्ष्मी, तस्मिना,,, इन कई लोगों ने खूब काम किया है और खूब काम करेंगे उनसे उम्मीदें बहुत है। उम्मीद है कि हिन्दी का जो पक्ष अन्धेरे है, वो उसमें प्रकाश भरेंगे और भर रहे हैं।

प्रश्न - 12. आपके मार्ग दर्शन में कई छात्रों ने शोध कार्य किया है, तो आज हिन्दी के क्षेत्र में शोध कार्य की दिशा एवं दशा केसी है?

डॉ. पुरोहित - क्या दशा बताऊं, उत्कल यूनिवर्सिटी में तथा बालेश्वर में शोध कार्य हुआ करता था, वह बंद हो गया। लेकिन बुरा भी कैसे कहूँ? सम्बलपूर विश्वविद्यालय एवं रामादेवी विश्वविद्यालय में स्नात्कोत्तर एवं शोध कार्य भी शुरू हो गया है। शैलबाला में स्नात्कोत्तर हो गया है। इसतरह किसी दिशा में काम बिगड़ता है, तो किसी दिशा में बनता और बढ़ता है।

प्रश्न - 13. हम हिन्दी छात्रों का भविष्य कैसा है ?

डॉ. पुरोहित - हिन्दी छात्रों का भविष्य बहुत उज्जवल है। इतनी संभावनायें हैं कि और किसी भाषा में नहीं मिलेगी।

• हिन्दी शिक्षक • हिन्दी अध्यापक • हिन्दी ऑफिसर • हिन्दी क्लर्क • हिन्दी अधिकारी

बहुत प्रकार की बहुत सारी नौकरियाँ खुल गयी हैं, और खुलेंगी भी। लेकिन शुद्ध हिन्दी आनी चाहिए।

प्रश्न - 14. सर, आपने जब अपनी पढ़ाई शुरु की होगी और हिन्दी विषय के रूप में चुना होगा तब हिन्दी पढ़ने और पढ़ाने में विरोध था?

डॉ. पुरोहित - विरोध नहीं था, परंतु किताबें नहीं मिलती थी। मैं एक लाइब्रेरी में जाता था, वह सुबह सात बजे खुलती थी, मैं सुबह 07:30 बजे से रात नौ बजे तक वहां बैठा रहता था। वहां सारी किताबें मिलती थी। ऐसे ही मुझे काम और पढ़ाई बहुत कठिनाई से करना पड़ा।

प्रश्न - 15. आपने सूरीनाम में 'विश्व हिंदी सम्मेलन' का हिस्सा बने। वैश्विक धरातल पर हिंदी की क्या स्थिति है?

डॉ. पुरोहित - वैश्विक धरातल पर हिंदी की स्थिति अच्छी है। विशेषकर हमारे वैज्ञानिकों ने इस दिशा में सराहनीय कार्य किया है। आज मोबाइल, कम्प्यूटर, इंटरनेट, वेबडिसाइनिंग आदि सभी क्षेत्रों में हिंदी का साम्राज्य फैलता जा रहा है। वैश्विक धरातल पर हिंदी की स्थिति निश्चित रूप से बहुत अच्छी है।

प्रश्न - 16. हम अपने महाविद्यालय में हिन्दी भारती नाम से ई-पत्रिका निकालते है इसकी प्रतियाँ आपने देखी हैं, उसके बारे में आपकी प्रतिक्रिया क्या है?

डॉ. पुरोहित - इस पत्रिका के अंक मैंने देखे हैं। बड़ी सुन्दर पत्रिका है। ओड़िशा में अभी तक हिन्दी की कोई ई-पत्रिका नहीं निकली है। इसलिए आपको साधुवाद। इसमें आप छात्राओं की चुनी हुई रचनाओं में सृजनात्मकता और रचनाधर्मिता स्थान पा रही है, जो अत्यंत प्रशंसनीय है। मैं महाप्रभु जगन्नाथ जी से प्रार्थना करूंगा कि आपके प्रयास सफल हो।

आत्म विश्वास रखो ये कभी मत सोचो कि हिंदी का भविष्य खराब है, हिंदी में भविष्य बहुत अच्छा है। लेकिन थोड़ा समय लगता है, धैर्य रखो।

मूल्य विघटन : साहित्य और भाषा का संदर्भ

प्रोफेसर पूरन चंद टंडन,
हिंदी विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली।

'मूल्य' शब्द मूल धातु से भाव में पत् प्रत्यय लगाने से बना है, जिसका अभिप्राय किसी वस्तु के विनिमय में दिया जाने वाला धन, दान या बाजार भाव आदि है। 'मूल्य' मानव समाज की सभ्यता और संस्कृति का संवारक तत्व है। मूल्य पारस्परिक व्यवहार का मापक है। यह शाश्वत होने के साथ-साथ काल सापेक्ष भी है। यही कारण है कि समाज में मूल्य सदैव बनते-मिटते आए है। समाज प्रायः अपनी आवश्यकता के अनुसार मूल्यों का निर्धारण करता है। समाज की सबसे छोटी इकाई व्यक्ति है। व्यक्ति स्वभाव से स्वतंत्र और स्वच्छंद है। इसकी स्वच्छंदता को असंगत मर्यादा द्वारा यदि समाज बांधता है तो व्यक्ति विद्रोह कर उठता है। इसी विद्रोह से सामाजिकता के घेरा टूटता है और जीवन के नवीन मूल्य उभरने लगते हैं। इस प्रकार मूल्यान्वेषण एक परंपरागत प्रक्रिया का रूप ले लेती है जो व्यक्ति-समाज से होती हूई नैतिकता, व्यावहारिकता, आध्यात्मिकता से जुड़ती हुई अर्थ, राजनीति और संस्कृति को भी अपने में समाहित कर लेती है। अतः स्पष्ट है कि मूल्य का मान व्यक्ति, समाज, संस्कृति, राजनीति, नैतिकता और व्यावहारिकता आदि सभी से परिपूर्ण हो विकसित होता है।

मूल्य समाज के सामूहिक प्रयत्नों का परिणाम है। अतः साहित्य में मूल्यों की अभिव्यक्ति बिंबात्मक या प्रतीकात्मक रूप में होती है, ज्ञान विज्ञान या नैतिकता की तरह तर्कपूर्ण या सिद्धांत रूप में नहीं। साहित्यकार समाज से अनुभव निजी अनुभवों द्वारा व्यावहारिक मूल्यों का सृजन करता है। अपने मूल्य युगीनबोध से प्रेरित होते है जिनसे वह मार्ग दिखाने के साथ-साथ बदलते मूल्यों को भी यथास्थान वर्णित करता है। वस्तुतः मूल्यों में व्यवहार समयानुसार होते ही है और इसी व्यवहार से नवीन मूल्य सृजित भी होते हैं। साहित्यकार ही इन मूल्यों का भोक्ता और निर्माता होता है जो कि समाज से मूल्यों को ग्रहण कर उनकी अभिव्यक्ति करता चलता है। साहित्यकार आदि काल से ऐसा करता आया है और आज भी मूल्याभिव्यक्ति अनवरत रूप से चल ही रही है।

हमारा वर्तमान समाज पारंपरिक सामाजिक व्यवस्था से पृथक हो नूतन आधुनिक सभ्यता में प्रवेश कर रहा है। आज हमारी संस्कृति संक्राति के दौर से गुजर रही है। जीवन के प्रति वैद्धिक एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण उभर रहा है। पाश्चात्य जीवन एवं शैली के देश से आज सभी त्रस्त हैं। मूल्य चूँकि समाज सापेक्ष होता है अतः समाज संस्कृति के संक्रांति काल में मूल्यों पर भी संकट उपस्थित हो गया है। साहित्य में अब मूल्यहीनता, मूल्य-संकट, मूल्य शून्यता, मूल्य विघटन आदि अनेक शब्द पारंपरिक मूल्यों

के स्वीकार हेतु प्रचलित हो गए हैं। इस संदर्भ में कुछ विद्वानों का मत है कि मूल्य विघटन मूल्य के ध्वंस होने की स्थिति है जबकि कुछ विद्वानों की धारणा है कि नूतन युगानुरूप मूल्य निर्माण की भूमिका ही मूल्य विघटन है। वस्तुतः आज का समाज संक्रमण की स्थिति में भटक रहा है। अब सब कुछ परिवर्तित होता जा रहा है। धर्म, ईश्वर, भक्ति, आस्था, विश्वास आदि का स्थान विज्ञान, मानव, बुद्धि, तर्क और स्वार्थ ने ले लिया है। मानव अपना वियामक स्वंय बन बैठा है। वह देवी सत्ता को समर्पित नहीं बल्कि समाज और इह लोक की ही चर्चा करता है। वह अब अस्मिता की खोज में संलग्न है। संहारक विज्ञान, युद्ध की विभीषिका, स्वार्थी राजनीति, अर्थ लिप्सा और लालुय संगठनों ने मानव के व्यक्तित्व को पूर्णतः खंडित और विर्घारत कर दिया है। अब मानव दिशाहीन हो अंधी दौड़ में लगातार भाग रहा है। समाज में रहता हुआ भी वह स्वंय को अकेला अनुभव करता है तथा मौन कुंठाओं से त्रस्त होकर मृत्युबोध, अजनबीपन, संत्रास से युक्त हो गया है। उसका निज स्वातंत्र्य और अस्तित्व खतरे में पड़ गया है। आर्थिक मंदी ने उसकी लाठी तोड़ दी है ओर वैयक्तिक निराशा ने उसे आकृतिहीन बना दिया है। ऐसे में पूरा समाज अस्त व्यस्त सा प्रतीत होता है।

मूल्य विघटन से संबंधित दो विचारधाराएँ आदर्श भाव को पोषित कर पुरातन मूल्यों की प्रतिष्ठा से संलग्न रहती है। यह विचारधारा परंपरा का पोषण कर समाज-परिवार एवं संस्कृति की व्याख्या करती है। दूसरी विचारधारा व्यावहारिक एवं प्रगतिशील मानी गई है जो समाज में युगीन माँग के अनुसार परिवर्तन की पदाधर रही है। पहला वर्ग विज्ञान के स्थान पर हृदय और अध्यात्म को पोषित करती है जबकि दूसरी विचार धारा वृद्धि एवं तर्क पर आधारित होती है। तर्क से गुजरती ऐसी विचारधारा में भटकाव एवं कुंठा के अवसर अधिक होते हैं। यही कारण है कि यह विचारधारा विकास और विनाश दोनों को साथ लेकर चलती है। आज के युग में इसी प्रकार विकास-विनाश का खेल चल रहा है। आज स्वच्छंद एवं प्रगतिशील हैं लेकिन साथ ही और कुठांओं और अकेलेपन से त्रस्त भी। आज भौतिक सुख सुविधाओं के सभी साधन है लेकिन साथ ही अणु विस्फोट का भय भी आज हमारा संसार सिमट कर एक परिवार में परिवर्तित हो रहा है लेकिन वास्तविक परिवार में बिखराव आ रहा है। अब विवाह भी जन्म जन्मांतर का बंधन न होकर कुछ वर्ष साथ रहने का 'कांट्रेक्ट' मात्र बन कर रह गया है। प्रेम दैहिक आकर्षण में परिवर्तित हो चुका है जिसमें निःस्वार्थता के भाव को नकारा जा चुका है। हमारा सांस्कृतिक एवं आर्थिक पतन भी लगातार हो रहा है। राजनीतिक मूल्यों में मतभेद के स्थान पर मनभेद लगातार बढ़ रहा है तथा स्वार्थ-अवसरवादिता और दल बदल का भाव प्रधान होता जा रहा है। छल प्रपंच की नीति ही राजनीति बन चुकी है। हमारे आज के ऐसे उत्तार आधुनिक समाज की तस्वीर हिंदी साहित्य में अनेक स्थलों में देखी जा सकती है।

साहित्य और मूल्य में धनिष्ठ संबंध रहा है। साहित्य में मूल्य विघटन का स्वरूप अनेक रूपों में देखने को मिलता है। साहित्य का मूल विषय मूल्य निर्माण और बदलते मूल्य के विश्लेषण द्वारा मानव को दिशा प्रदर्शन रहा है। यही कारण है कि हिंदी साहित्य के आरंभ से ही मूल्य विद्यटन के स्वरूप को

देखा जा सकता है। आदिकालीन हिंदी साहित्य में सिद्धों एवं नाथों ने रूढ़ियों एवं मूर्ति पूजा का खंडन कर स्वार्थ भावना का चित्रण किया। उनके साहित्य से ज्ञात हुआ है कि किस प्रकार मूर्ति-पूजा की आड़ में मनुष्य स्वार्थ-साधन में ही संलग्न अमीर खुसरो ने भी मूकरियों के माध्यम से भटके समाज के स्वर्ग युग भक्तिकाल में यहाँ एक ओर आस्था-विश्वास का दीप प्रज्ज्वलित किया गया वहीं रूढ़ियों-आडंबर के चित्रण द्वारा पथभ्रष्ट मानव की ही जगाया तो सूफी साहित्य ने भारतीय समाज की संकीर्ण करती लोक-सांस्कृतिक परंपरा की ओर संकेत कर भारतीयता की बदतर होती व्यवस्था का वर्णन किया।

गोस्वामी तुलसीदास ने राम कथा के माध्यम से विविध मूल्यों की प्रतिष्ठा की उन्होंने जहाँ एक ओर आस्था विश्वास जैसे मूल्य स्थापित करते हुए राम राज्य की परिकल्पना द्वारा आदर्श राज व्यवस्था को चित्रित किया वहीं दूसरी ओर कवियुग वर्णन द्वारा आगे आज के ही जीवन की व्याख्या की है। ऐसे वर्णन में उन्होंने मानव-जीवन के बदलते स्वरों की व्याख्या की है तथा बदलती सांस्कृतिक, राजनैतिक, नैतिक, धार्मिक, आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था का चित्रण किया है। इन सभी तत्वों का मूल संबंध वस्तुतः मानव मन से रहा है तथा मन का बदलता है। मन के बदलते रूपों और कुठाओं का सबसे सूक्ष्म एवं तात्विक विश्लेषण बहुचर्चित मनोवैज्ञानिक क्राचड ने किया है। उनके अनुसार मनुष्य का जीवन मन से संचालित होता है। उन्होंने मानव के अचेतन मन का मूलोधार दमन को माना है। दमित व्यक्ति अपने प्रिय व्यक्ति के भावों एवं कार्यों से तादात्मय स्थापित कर स्वंय को उसी के अनुरूप बनाने का प्रयत्न करता है। ऐसे में निराशा मिलने पर हताश हो कुंठित होने लगता है। कुंठ कामेच्छा को तीव्र बनाती है और तीव्रता के कारण उसका जीवन गहन गर्व की ओर घूमने लगता है। यही कारण है कि तुलसीदास एक ओर 'मोह सकल व्यधिन कर मूला' कहकर मोह को ही समस्त रोग एवं कुंठाओं का मूल मानकर इससे दूर रहने का परामर्श देते हैं वहीं दूसरी और सूरदास ने गोपी-प्रसंग द्वारा दमित भाव युक्त नारी की दशा की ओर संकेत किया है। सूरदास ने बाल मनोविज्ञान का भी चित्रण कर बालक में विकसित होती विविध इच्छाओं का बड़ा सूक्ष्म एवं मार्मिक अंकन किया है। इसी का विकसित रूप आज के बाल-गोपालों में देखा जा सकता है जो इंटरनेट के युग में अपनी स्वाभाविक चंचलता से दूर हो कपोल कल्पनाओं और भौतिक सुविधा की स्वर्णिम कारा में उलझते जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त बदलती सामाजिक वृति एवं मान का विश्लेषण रीतिकाल में किया गया। किंतु बदलते मूल्यों का सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं गहन विश्लेषण आधुनिक कविता एवं साहित्य में ही देखने को मिलता है। आधुनिक साहित्य मानव-जीवन का साहित्य है जिसमें समकालीन समस्याओं एवं कृतियों का सर्वाधिक मात्रा में विश्लेषण किया गया है।

भारतेंदु युग से ही हमें मूल्यों में टकराहट देखने को मिलती है। यह काल मूल्य विघटन का बिन कहा जा सकता है। औद्योगिक क्रांति की ओर उन्मुख भारत अब सामंत एवं जमींदार के चंगुल से निकल कर पूँजीपति की ओर बढ़ता है। मध्य वर्ग और उनके जीवन से जुड़ी तमाम समस्याएँ इसी काल में सबसे पहल दिखती है। मध्यवर्ग शिक्षा की ओर बढ़ता है लेकिन अंग्रेजी दासता के इस युग में शिक्षा-सत्र

में भी उसका शोषण होता है। इस युग में कुरीतियाँ अंधविश्वास तो सर ताने खड़े हैं ही आम व्यक्ति भी अब सूट-बूट पहनकर अंग्रेजी जीवन की नकल के चक्रव्यूह में उलझने लगता है। इस युग का परिवार भी विघटन की प्रक्रिया पर अग्रसर था। पारिवारिक जीवन में विषमताएँ व्याप रही थीं और मूल्य संक्रमण का आरंभ हो गया था। बाल विवाह, अनमेल विवाह या बहु विवाह की समस्या से प्रायः प्रत्येक परिवार जूझ रहा था। हमारा आर्थिक शोषण बड़े स्तार पर हो रहा था। अंग्रेजों की औधौगीकरण की नीति ने मजदूरों को शहर पहुँचा दिया। परिणामतः ग्राम व्यवस्था चरमराने लगी और ग्रामीण उद्योग समाप्त होने लगे। संस्कृति एवं परंपरा पर अब विश्वास डगमगाने लगा तथा भारतीय गुरुकुल एवं जीवन-मूल्य की शिक्षा का स्थान अंग्रेजी स्कूल-कॉलेज तथा व्यवसायी दृष्टिकोण ने ले लिया। भौतिकवादी संस्कृति हम पर हावी होने लगी। भारतेंदु हरिश्चंद्र, चं बालकृष्ण भट्ट, पं अंबिकादत्ता व्यास, चौधरी बदरीनारायण प्रेमचंद आदि साहित्यकारों ने अपने काव्य तथा नाटक द्वारा तत्कालीन भारतीय समाज की ऐसी ही तस्वीर रखी। उन्होंने मूल्य विघटन का स्वरूप बड़े पैमाने पर चित्रित किया।

भारतेंदु युग द्वारा चित्रित भारतीय समाज की समस्याओं का विराकरण जागरण सुधार काल द्विवेदी युग में देखने को मिला। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से जहाँ एक ओर परिवर्तित मूल्यों का स्वरूप उपस्थित किया वहीं भारतीय जनमानस में सुधार की वृति को पल्लवित-पोषित किया। मैथिलीशरण गुप्त 'भारत भारती' द्वारा जहाँ एक ओर मूल्य विघटन के प्रति चिंतित होते हुए जनमानस को आत्म या भारतीय संस्कृति साक्षात्कार के लिए प्रेरित करते हैं -

'हम कौन थे क्या हो गए और क्या होंगे अभी'

आओ हम मिलकर विचारे ये समस्याएँ सभी।

वहीं दूसरी ओर उन्होंने वर्तमान खंड द्वारा भारत की बदलती तस्वीर को ही उतारा है। उनके अनुसार दरिद्रता हमारे देश की सबसे बड़ी समस्या है जो कि आर्थिक शोषण एवं आर्थिक निर्भरता के कारण जन्मी है। हमारा कृषि जीवन नष्ट-भ्रष्ट हो चुका है। मूल्यहीन भारतीय समाज होता जा रहा है जो केवल स्वार्थ साध कर व्यावसायिक बुद्धि से ही काम होता है। पूँजीपति वर्ग की संख्या बढ़ रही है साथ ही उनका दिखाना और अच्चाशी भी। शिक्षा का व्यवसायीकरण हो रहा है। साहित्य ओर कलाएँ भी यश एवं अर्थ को प्रधानता दे रही है। धर्म अपने मूल रूप से भटक चुका है। साधु-संत, महंत, चारों वर्ण सपने अपने धर्म से च्युत हो चुके हैं। नारी को भोग की वस्तु ही माना जाता रहा है। अंध परंपराओं ने भारतीय परंपरा को अतीम क्षति पहुँचायी है। ऐसे में संपूर्ण भारत की तस्वीर खींच गुप्त जी कहते है -

'भारत! तुम्हारा आज यह कैला भयंकर वेष है?

है और सब निःशेष केवल नाम ही अब शेष है।

ब्रह्मत्व, राजन्यत्व युत वैश्यत्व भी सब नष्ट है,

भूद्रत्व और पशुत्व ही अविशिष्ट है, हा! कष्ट है।'

बदलते भारत की एवं मूल्य संक्रमण के ऐसे दृश्य छायावाद, प्रगतिवाद एवं प्रयोगवाद में भी देखने को मिलते हैं। हमारा दृष्टिकोण रोनैण्टिसिज्म से गुजरता हुआ कार्ल मार्क्स की विचारधारा और अस्तित्ववादी चिंतन की ओर उन्मुख होता है। जयशंकर प्रसाद, पंत और निराला जैसे साहित्यकार जहाँ एक ओर प्रकृति-पुरुष के संबंधो की चर्चा करते हैं वहीं अंग्रेजो से मुक्ति का शंखनाद भी फूँकते हैं। इसी दौरान वे नारी के प्रति बदलते दृष्टिकोण एवं बदलते भारतीय समाज का चित्रण करते हैं। प्रसाद जी तो अपने नाटकों द्वारा वर्तमान भारत की समस्याओं के चित्रण के साथ-साथ भविष्य निर्माण की भी कामना करते हैं। किंतु प्रगतिवादी चिंतन में विघटन सामाजिक मूल्यों को विशेष रूप से चित्रित किया गया है। समाज के सभी वर्ग आज आपसी वैमन्स्य में निमग्न है। सभी एक दूसरे की भर्त्सना कर रहे हैं। आज का समाज उच्च एवं निम्न वर्ग में बंटा हुआ है। उच्च वर्ग निम्न वर्ग से पृथक महल खड़ा कर रहा है। वह श्रमिकों एवं मजदूरों का अधिक से अधिक शोषण कर रहा है लेकिन साथ ही श्रृमिक कही संगठित होकर विद्रोह न कर दे इसके लिए भी वह किसी न किसी रूप में उन्हें सहायता पहुँचाकर उनके आक्रोश को शांत रखने की कोशिश कर रहा है। वस्तुतः शोषक एवं शोषित का संधर्ष स्वाभाविक है। सर्वहारा वर्ग अपने समुचित अधिकरों को प्राप्त करने के लिए संधर्षरत है क्योंकि शोषक का शोषण भिन्न-भिन्न रूप में बढ़ रहा है। शोषक और शोषित की स्थितियाँ बदतर होती जा रही है। नागार्जुन, यशपाल, मुक्तिबोध, धूमिल आदि ने अपने साहित्य द्वारा समाज में होते आर्थिक शोषण को व्यापक रूप में चित्रित किया है। इस प्रकार का चिंतन स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद अधिक रूप में आया है तथा विघटन मूल्यों का समकालीन रूप भी स्वतंत्रता के बाद से ही देखने को मिलता है। रांगेय राघव द्वारा रचित 'लोई का ताना' एक सशक्त उपन्यास है जिसमें कबीर की विद्रोही चेतना का आंधुनिकीकरण करते हुए स्वतंत्र्योतर भारत की आर्थिक समस्या को दिखाया गया है। हिंदी नाटकों विशेषकर स्वातंत्र्योतर हिंदी नाटकों में भी पूँजीनति एवं सर्वहारा वर्ग के संघर्ष की स्थितियों को विराट रूप में देखा जा सकता है। विनोद रस्तोगी कृत 'आजादी के बाद', डॉ. लक्ष्मी नारायण लाल कृत 'रक्त कमल' इसी प्रकार के नाटक हैं। अर्थ ही सारे अनर्थों की जड़ है' इस विचार को पोषित करता 'नया भगवान' नाटक निम्नवर्गीय समाज की समस्या को उपस्थित करता है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात मूल्य विघटन का स्वरूप भारत के हर क्षेत्र में देखने को मिला। व्यक्ति के स्वर से परंपरा-संस्कृति तक, राजनीति से अर्थ व्यापार तक तथा नैतिकता से समाज-परिवार-धर्म तक

हर क्षेत्र में मूल्य विघटन हो रहा था। स्वातंत्र्योतर साहित्य इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय से लेकर आज की समकालीन साहित्य तक में मनुष्य और उसके जीवन की यथार्थपूर्ण व्याख्या की गई है। आज का व्यक्ति यदि एक ओर पुराने संस्कारों और मान्यताओं से बंधा रहना चाहता है वहीं दूसरी और आधुनिक विचारों और मानों से भी युक्त होना चाहता है। ऐसे में वह कही न कहीं भटककर धुरीहीन एवं अकेला हो रहा है। वह स्वंय को अकेला अजनबी एवं निराश जानकर आरमभीरू और स्वार्थी हो रहा है। उसके मन में, जीवन में एवं अस्तित्व में क्षणवाद, स्वार्थयत्ता, भौतिकता और अनुशासनहीनता समाहित होती जा रही है। वह व्यापक हित की जगह स्वहित को साधने में लगा है। उसकी वैयक्तिक आस्थाएँ बदल रही हैं। वह समय ये आगे की सोचता है और वस्तु तत्व न मिल पाने पर अपने को ही दुख देने लगता है। उसकी आरमपीड़ा बढ़ रही है और इस पीड़ा के कारण उसका स्वंय का अस्तित्व संकट में है। श्रमहीन हो वह अधिक से अधिक अर्जित करना चाहता है। इसलिए समकालीन साहित्य में ऐसे व्यक्ति के भटकाव को व्यापक रूप से चित्रित किया गया है। अज्ञेय, मुक्तिबोध, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, रघुवीर सहाय, नरेश मेहता, केदारनाथ सिंह आदि से लेकर दूधनाथ सिंह, कृष्ण बलदेव वैद, मृदुला गर्ग, कृष्ण सोबती, कमलेश्वर आदि साहित्यकारों तक ने ऐसे मानव ही वैयक्तिक पीड़ा देखने को मिलती है जो मूल्यहीन बन महत्वाकांशा के जाल में उलझ कर आत्मपीड़ा परक जीवन जी रहा है।

महानगरीय बोध समकालीन समाज का सबसे भयावह रूप प्रदर्शित करता है। आज के नगरीय जीवन में दबाव और संघर्ष की स्थिति सर्वाधिक मात्रा मे विघमान है। निरंतर बढ़ती आर्थिक विषमता ने आज सीमित कर व्यय के साधनों में निरंतर वृद्धि कर दी है। औद्योगीकरण ने आजत के मनुष्य को आधुनिक बनाया किंतु साथ ही बताया उसे महत्वकांशी और अशांत। यांत्रिक युग में वह स्वंय यंत्र-सा हो गया है और वृति से पाशविक एवं हिंसक। आज का साहित्यकार मानवता का संबंध मानवता से नहीं बल्कि किसी वाद, संस्था, दल, संध या मंच से मानता है। यहां का व्यक्ति मुखौरों में रहता है तथा संकीर्ण-सीमित दायरे में जीवन जी रहा है। पश्चिमी सभ्यता के अनुकरण पर अब स्थान स्थान पर होकर, रेस्ट्रां, मोटल आदि खुल गए है जिसमें शराब के जाम के साथ अंधनग्न अवस्था में जिस्म का खुलकर प्रदर्शन हो रहा है। महानगरीय जीवन बड़ी-बड़ी इमारतों से लेकर निर्धन बेसहारा लोगों की झुग्गी झोपड़ी तक विस्तीर्ण है। भोग विलास में व्यस्त आज का मानव इस तथ्य की ओर बिल्कुल ध्यान नहीं देता। एक दूसरे से कटकर कृत्रिम जीवन जीना, अनेक मुखौटे लगाना और स्वार्थ साधना महानगर की पहचान बन चुका है।

समकालीन साहित्य की सामाजिकता का सबसे प्रमुख अंग है - पारिवारिक जीवन का चित्रण। आज का साहित्यकार परिवार के बदलते स्वरूप को भी अपने चिंतन का विषय बनाता है। आज के औद्योगिकी-वैज्ञानिक युग में परिवार का स्वरूप पूर्णतः बदल गया है। संयुक्त परिवार प्रथा प्रायः अंतिम कगार पर है और एकल परिवार चरम रूप में दिख रहा है। इसका सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारण आर्थिक व्यवस्था है। रोजगार प्राप्ति हेतु एक शहर से दूसरे शहर में अंतरण होता है और संयुक्त परिवार एकल

परिवार में बदल जाता है। अब व्यक्ति उपयोगितावादी हो गया है। वह संबंधों को भी उपयोगिता के तराजु पर तोलता है। लाभदायक सदस्य ही उसका पारिवारिक सदस्य है अन्यथा वह धीरे-धीरे इसमें संबंध विच्छेद कर लेता है। पति-पत्नी का संबंध क्षणिक हो गया है जबकि संतान सुख भी लाभ के दायरे में चला गया है। अब तो एक या दूसरे की अजपेक्षित उपस्थिति भी संबंधों में कड़ुवाहट उत्पन्न करती है। संबंधों के अंतर्गत सबसे बड़ी क्रांति आज विवाह तथा दांपत्य संबंधों में आई है। आत विवाह का आधार प्रेम, भावात्मक संवेदना या विश्वास नहीं अपितु अब एक साथ रहने का समझौता मात्र है। अतः वैवाहिक दांपत्य जीवन में कुंठा, अब, भप, जड़ता, ग्लानि, तनाव, अलगाव, नीश्सता आदि अधिक बढ़ रही है। आधुनिक कविता, उपन्यास, एवं कहानियों में इस प्रकार की पारिवारिक टूटन स्पष्टतः देखी जा सकती है।

आज की कविता में मौन-चेतना की प्रतिक्रिया पर्याप्त सशक्त रूप में व्यक्त हुई है। कहीं-कहीं तो काम-भवना को साहित्य का सबसे बड़ा वर्ण्य विषय मान लिया है। आज की भूखी पीढ़ी में नंगापन इस प्रकार से अभिव्यक्त हो रहा है कि उसे ढकने के सभी साधन कम पड़ गए है। आज का व्यक्ति वुभक्षा से पीड़ित है। वह पेट की भूख, अस्तित्व की भूख और महत्वाकाशां की भूख के साथ-साथ यौन की भूख से भी ग्रस्त है। उसकी यौन वृति अन्य भूख पर हावी-सी होने लगी है। परिणामस्वरूप प्रेम का नैतिक-विश्वास परक रूप विरोहित हो चुका है और आज के युवक-युवतियों पर यौन प्रवृति इस प्रकार अंकित हो चुकी है कि इस भाव की वृष्टि के अतिरिक्त उन्हे अन्य कुछ सूझता ही नहीं है। आज के स्त्री-पुरूष में लिप्सा, स्वर्धा ओर सैक्स का भाव प्रबल हो रहा है। वैवाहेवर संबंध बढ़ रहे हैं, तलाक सामान्य सी वृति बन चुकी है। काम-वासनाएँ नग्न रूप में समझे आ रही है परिणामतः कुटिसत भावनाएँ, अविश्वास और कुंठाएँ प्रबल हो रही हैं। यही नहीं आज का रोमांस और यथार्थ एक ही कोण के दो तत्त्व बन चुके हैं।

विघटन मूल्यों से नारी भी अछूती नहीं रही है। आज की नारी आधुनिक है, कार्यशील है, लेकिन विचारों को पूर्ण रूप से जीवन में परिवर्तित नहीं कर सकी है। शिक्षित होने के बाद भी आज की नारी गृहस्थी के बोझ में पिस कर रह जाती है। नारी आजकल या तो परंपराबद्ध हो पतिनिष्ठ तनकर पिसती रह जाती है या अँधानुकरण का शिकार बन अत्याधुनिक बनने के फेर में फैशनर के फाँम में फँस कर रह जाती है। वह कार्यशील है, वह मध्यवर्गीय चेतना का शिकार भी। वह शिक्षित है लेकिन साथ ही पाश्चात्य संस्कृति के प्रति इच्छुक भी। वह अपने अस्तित्व के प्रति संघर्षरत है लेकिन साथ ही व्यक्तित्व से चंचल, लापरवाह और संवेदनशील भी। आज के साहित्य में ऐसी कार्यशील नारी को चित्रित किया गया है जो आर्थिक कारणों से मानसिक संतुष्टि हेतु पुरुष के बराबरी के लिए संघर्ष करती है और कार्यशील बन दोहरे दायित्व को सहर्ष निभाती है। वही दूसरी ओर कुछ ऐसी उच्चवर्गीय नारी को भी देखा जा सकता है जो आर्थिक रूप से संपन्न होने के कारण भोग विलास युक्त जीवन जीती है। वह सामाजिक-पारंपरिक सांस्कृतिक मूल्यों की अवहेलना निडर होकर कर सकती है। यही नहीं स्वार्थ सिद्धि हेतु वह किसी भी सही या गलत रास्ते को निःसंकोच अपना सकती है। साथ ही दिखावे तथा ठोंग ठकोस्लो से युक्त हो किही मार्टी को ही अपना जीवन स्तर मानती है। आज के साहित्य में सर्वाधिक संधर्षरत रूप मध्यवर्गीय

नारी का देखा जा सकता है जो स्वप्न देखती है लेकिन समाज की रूढ़ियों से ग्रसित हो उन्हें पूरा नहीं कर पाती। ऐसे में भटकाव की स्थिति में वह पहुँचती है और विद्राही बनकर समाज को भी भटकाने लगती है। आज की नारी में मूल्य संबंधी विविध बिखराव की स्थिति देखने को मिलती है जिसकी अंभिव्यक्ति मन्नू भंडारी, मृदुला गर्ग, कृष्णा सोबती, शिवानी जैसी महिला साहित्यकारों के साथ-साथ कमलेश्वर, गिरिजाकुमार माथुर, रघुवीर सहाय, जगदीश चतुर्वेदी आदि के साहित्य में भी देखी जा सकती है।

मूल्य विघटन का स्वरूप राजनीति एवं सांस्कृतिक तŸवों में भी देखने को मिलती है। आज जनतंत्र है किंतु फिर भी जनता और नेता के बीच का अंतर बढ़ रहा है। धन और शक्ति का बोलबाला चुनाव के क्षेत्र में बदला जा रहा है। दलबदल अब सामान्य सी बात हो गई है। अवसरवादिता ओर व्यापारिक प्रवृति के कारण जनता को सभी हथियार की तरह प्रयोग कर रहे हैं। राष्ट्रीयता का भाव समाप्त हो चुका है जबकि बाजारीकरण के दौर में वोट बेचने-खरीदने की वृति लगातार बढ़ रही है। जनता की आड़ में जुलुस, प्रदर्शन, नारे-बाजी, भूख हड़ताल द्वारा राजनीति के तबे पर स्वार्थ की रोटी सेकी जा रही है। गाँववाद, मार्क्सवाद अब वाद या विचार मात्र रह गए है जिसके नाम पर चथ एवं सत्ता अर्जित की जा रही है राम-रहीम के नाम पर राजनीति की जा रही है ओर कश्मीर-अयोध्या जैसे मासलों को मात्र चुनाव समय के लिए सीमित किया जा रहा है। इस प्रकार आज का राजनीति केवल स्वार्थ भाव के कारण भ्रष्ट और खोखली है। राजनीति करने वाले सफेद पोश भेडियों की पोल रघुवीर सहाय, भवानी प्रसाद मिश्र, शंभुनाथ सिंह, शमशेर बहादुर सिंह, कैलाश बाजपेयी जैसे साहित्यकारों ने खूब खोली है।

संस्कृति का मूल रूप धर्म से व्यक्त होता है। आजकल धर्म व्यवसाय बन चुका है। अब त्याग, तप और भक्ति जैसे मूल्य धर्म से विरोहित हो चुके है तथा महंत, संत और गद्दी की राजनीति में उलझ गए हैं। आज का समाज वास्तिक मान को पोषित कर रहा है तथा मनुष्य अपने अस्तित्व की रक्षा में संलग्न हो ईश्वर के अस्तित्व को नकार रहा है। यहाँ तक कि आत्म तत्त्व पर भी अब विश्वास उठ चुका है। बौद्धिक समाज के आज के युग में ईश्वर को तर्क की कासौटी से कसा जा रहा है परिणामतः ईश्वर के मूल रूप को भूलकर हम अब स्वार्थ को ही अपना मूल धर्म मान बैठे हैं। समाज मे प्रचलित समस्त धर्मो के अनेक अनुयायी आपस में घृणा और द्वेष का भाव रख स्वार्थलिप्सा की पूर्ति करते हैं। कुवर नारायण, धर्मवीर आदि साहित्यकार धर्म-अध्यात्म के बदलते स्वरों का बड़ा सजीव चित्रण करते हैं तथा बताते हैं कि किस प्रकार अब इंसान का मूल धर्म स्वार्थ लालच और युद्ध हो गया है -

‘वह नहीं इंसान की है संश्यता,

स्वार्थ, लालच, युद्ध जिसके देवता।’

शीतल षष्टि

शीतल षष्टि क्यों मनाई जाती है? इसे लेकर कई पौराणिक कथाएं प्रचलित है। इसी दिन शिव और पार्वती का शुभ विवाह हुआ था। शिव विवाह कोई साधारण विवाह नहीं था, प्रेम, समर्पण और तप की परिणति है शिव विवाह।

यह कहानी एक जन्म की नहीं है। पार्वती पिछले जन्म में भी शिव की पत्नी थी, तब उनका नाम सती था और वे प्रजापति दक्ष की बेटी थी। परम प्रतापी राजा दक्ष ने जानबुझ कर अपने दामाद शिव को अपमानित किया जिससे आहत होकर सती हवनकुंड में कूद गई। सती के वियोग में शिव में विरक्ति का भाव भर गया और वे तपस्या में लीन होगए।

उधर शिव को फिर से प्राप्त करने के लिए सती ने पार्वती बन कर हिमवान के घर जन्म लिया। देवताओं ने शिव जी का ध्यान भंग करने के लिए कामदेव को भेजा तो शिव ने उन्हें भस्म कर दिया। लेकिन पार्वती ने शिव को प्राप्त करने के लिए तप जारी रखा। आखिरकार बाबा भोलेनाथ को पिघलना पडा और वे नंदी पर सवार होकर पूरे शरीर पर विभूति लगाये हुए बड़े ठाठ से बारात लेकर आए। भूत-पिशाच, दूनिया के तमाम पशु-पक्षियों से लेकर कीड़े-मकोड़े तक इस बारात में थे। आखिर वो पशुपतिनाथ यानी समस्त पशुओं के देवता शिवजी का विवाह जो था। शिवजी से विवाह करके पार्वती उनके साथ कैलाश पर चली गई और इस तरह आदि दम्पतियों का विवाह संपन्न हुआ।

शिव जैसी उदारता दुनिया के किसी और देवी-देवता में विरल है। शिव को आशुतोष कहते हैं, यानी तुरंत प्रसन्न हो जाने वाला। जब भी कोई राक्षस तपस्या करता था इंद्र के कान खड़े हो जाते थे। देवराज बाकी देवताओं के साथ मिलकर ऐसी योजना करते थे कि भोलेनाथ किसी राक्षस को वरदान ना दे। लेकिन देने के मामले में शिव ने कभी भेद नहीं किया। भक्त चाहे देवता हो या राक्षस जिसने वर मांगा उसको मिला। चाहे भस्मासुर ही क्यों ना हो। यहां तक कि उन्होंने अमृत औरों में बांटा और विष खुद पी गए, भला कहाँ होगा पूरे दुनिया मे कोई ऐसा दूसरा?

शिव महापरिवार की तस्वीर ध्यान से देखिये, दुनिया में इतनी विलक्षण कोई और तस्वीर नहीं है। शिव का वाहन नंदी है, जो एक बैल है, पार्वती का वाहन शेर है, लेकिन शेर नंदी बैल को देख कर लार नहीं टपकाता है। तस्वीर में गणेश भी है और उनके साथ उनका वाहन नन्हा मूषक मौजूद है, लेकिन शिव के गले का साँप चूहे को निगलने के लिए नहीं दौड़ता है। कार्तिकेय का वाहन मोर है, वही मोर जिसका प्रिय भोजन साँप है, लेकिन मोर कभी साँप पर झपटा नहीं मारता, सब एक दूसरे के साथ खड़े है, शिव महापरिवार की तस्वीर ये बताती है कि जब तक सह-अस्तित्व है, तभी तक सृष्टि है, जहाँ सह-अस्तित्व नहीं है, वहां विनाश है। सभी जीवों का सम्मान ही शिव भक्ति का सार है।

लिज़ा मिश्र, +3 तृतीय वर्ष

विवाह,,, बंधन???

समय और उम्र दोनों ही चीज़ें इंसानों में परिवर्तित होती रहती है। जिसके अनुकूल वो सोचता है, विचार करता है, कुछ कर दिखाने की काबीलियत रखता है या खुद को बर्बाद कर देता है। आज एक ऐसे ही एक विषय पर मेरी एक सहेली से मेरा तर्क वितर्क हुआ। वो विषय था विवाह।

विवाह एक ऐसा बंधन है जो लड़का और लड़की को आपस में बांधे रखता है। एक नये समाज का गठन करता है। जो समाज के लिए अनिवार्य है। प्राचीन युग से लेकर आज तक उसे महत्व दिया जा रहा है।ले किन कुछ लोग इसे खेल समझते हैं, कुछ गंभीरता से लेते हैं, और इससे दूर ही रहते हैं, अर्थात करना ही नहीं चाहते हैं।

मेरी उम्र की आज बहुत सी लड़कियाँ विवाह को नापसंद करती हैं। उनमें से मेरे कुछ सहेलियाँ भी शामिल हैं। उनका कहना है कि विवाह आखिर करे क्यों, क्या होगा इसे करने से?? मैं अपनी संतुलित बुद्धि से उन्हें समझाने का प्रयत्न करते हुए कहती हूँ कि विवाह से समाज में नियत्रंण रहेगा और समाज में मनुष्य जाति की उन्नति होगी। फिर उनका दूसरा सवाल की जनसंख्या को बढ़ा कर हम अपनी हानी क्यों करें?? मेरा उत्तर - हानी तब होगी जब कुछ लाभ हो मतलब संसार में जितने जन्मते हैं उतने मरते भी हैं। तो हानि कहाँ से हुई?

तीसरा और आखरी सवाल - आज एक शिक्षित लड़की इस संसार में रह सकती है वो भी अकेली, तो उसे पुरुष के साथ की अवश्यकता क्यों?? एक यही सवाल आज की प्रायः हर लड़की के दिमाग में देखने को मिलती है। लड़कों की चिंताधारा से मैं परिचित नहीं हूं, कयोंकि मैं एक लड़की हूँ। मैंने भी कभी ऐसा सोचा था। लेकिन बाद में मैंने ये अनुभव किया कि अगर एक लड़की अपने आप को स्वाधीन घोषित करती है तो भी उसके पीछे उसकी माँ और सबसे बढ़कर उसके पिता का हाथ होता है। एक पिता विहीन बेटी या एक पति बिना पत्नी इस बात से अच्छी तरह से परिचित होती हैं कि उनके

जीवन में क्या कठनाई है और क्यों है? उस से भी बढ़कर जब एक मनुष्य के जीवन में बुढापा आता है तो उसके जीवन में कोई नहीं होता न पुत्र, न पुत्री, न माता और न ही पिता । सिर्फ एक इन्सान ही बुढ़ापे में उसका साथ देता है, वो हैं उसका पति/पत्नी ।

अनेक प्रश्न के उत्तर हम नहीं पा पाते है। हम खोजने की कोशिश तो करते है लेकिन दूसरों तक जाकर। जबकि उन प्रश्नों के उत्तर हमारे अंदर ही होते हैं।

कहाँ हैं हम??

जीते जी न हुआ किसी का
मरना तो दूर है।
आकाश में स्वर्ग ढूढ़ते है,
ये धरती क्या कमजोर है??

रिश्ता निभाना यहाँ होता नाटक
अपना स्वार्थ अनमोल है।
आदमी अगर खिलौना यहाँ,
तो किस बात का जोर है??

पुरूष बढाता अहंकार अपना
स्त्री का स्वाभिमान मर रहा है।
बच्चों के भविष्य का कोई न पता,
भगवान यहाँ बनता बिगडता है।

कानून के हाथ छोटे हो गये हैं
और नेताओं के भाषण लंबे।
स्वाधीन भारत बन चुका है,
फिर भी अपराधों का शोर है।

पिंकी सिंह, +3 तृतीय वर्ष

मोहन राकेश

व्यक्तित्व

मोहन राकेश का जन्म एक सामान्य परिवार में 8 जनवरी, सन 1925 ई को अमृतसर में हुआ था। इनके पिता पेशे से वकील थे, परंतु उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। राकेश जिस प्रकार के घर में रहा करते थे, उनके अपने ही शब्दों में "घर में सीलन रहती है। नालियों से बदबू उठती है। सीढियां अंधेरी है। घर में दम घुटता है, अंदर गली में भाग जाता हूँ। पकड़ कर लाया जाता हूँ, फिर भाग जाता हूँ, रो-रो कर बीमार हो जाता हूँ।"

राकेश केवल सोलह वर्ष के ही थे उनके पिता का मृत्यु हो गई। विषम परिस्थितियों में भी मोहन राकेश की शिक्षा का क्रम बना रहा। आरम्भिक शिक्षा अमृतसर में ही प्राप्त करने के बाद उच्च शिक्षा प्राप्त के लिए ये लाहौर चले गये। लाहौर के ओरिएण्टल कालेज में संस्कृत में एम.ए परीक्षा उत्तीर्ण की। राकेश ने हिंदी-साहित्य में एम.ए परीक्षा में प्रथम श्रेणी उर्त्तीर्ण की। इसके बाद सबसे पहले बम्बई में अध्यापन कार्य शुरू किया, वहाँ से कुछ समय बाद मोहन राकेश शिमला चले आये। वहाँ भी वह अधिक समय तक नहीं रुके और जालंधर चले आये। वहां से भी वह चले आये। वहाँ से वे दिल्ली चले आये और यहीं स्वतंत्र रूप से लेखन कार्य करते रहे।

उन्होंने कुछ दिनों के लिए 'टाइम्स ऑफ इंडिया' में प्रकाशित होने वाली 'सारिका' पत्रिका का संपादन किया। उनका स्वच्छंदतावादी व्यक्तित्व के वजह से वह वहां भी अधिक समय टिक नहीं पाए। वह वापस दिल्ली चले आये। स्वभावतः वे घुमक्कड़ थे। उनके स्वभाव में रंगिलापन था, और वह पियक्कड़ थे। उन्होंने विवाह भी एक से अधिक किये थे।

वे कहा करते थे कि, " मेरा भविष्य विशाल समुद्र में एक लंबी और अनिश्चित यात्रा है।" अपनी लेखन प्रक्रिया के बारे में एक बार स्वयं राकेश ने कहा था - "मैं क्या लिखना चाहता हूँ, यह कभी मन

में स्पष्ट नहीं रहता, जो कुछ लिखा जाता है, वह सब अधूरा या अतिरिक्त लगता है। लिखते हुए लगता है कि एक मकड़ी कागज पर बेकार का जाल बुन रही है। सिर बायीं तरफ तिरछा कर लेने से जाला बुनने की शुरुआत हो जाती है, रेशों की तरह कागज पर लकीरें बनने लगती हैं, पर अंदर फड़फड़ाते कोई को यह जाला नहीं; कुछ और चाहिए, कुछ और यानी सेक्स।" अपने इस कुछ और ' कि प्राप्ति के लिए राकेश ऊंचा हंसने, लड़कियों को ताकने, जैसी अनेक क्रियाएं करते थे। उनके साहित्य सर्जनाओं में भी यह सारी प्रक्रिया प्रत्यक्ष देखी पढ़ी जा सकती है।

वह अपने अध्ययन काल में कहा करते थे - "देखो, आर्थिक क्रांति के साथ-साथ दुनियाँ में एक और क्रांति का होना अनिवार्य है। वह क्रांति होगी मानवीय सम्बन्धों में, हमारी सामाजिक संस्थाओं में, धर्म, नैतिकता और संस्कृति - संम्बंधी हमारे सरकार जिस सभ्यता की देन है, वह खोखली पड़ चुकी है।"

जीवन में उन्होंने इस खोखलेपन को भोगा भी है, उनके जीवन में आर्थिक वैषम्य इस तक रहा था कि किराया चुकाए बिना मकान मालिक ने पिता का शव तक नहीं उठाने दिया था।

अपने विद्यार्थी काल से ही मोहन राकेश की नाटकों के प्रति विशेष रुचि रही थी। वे स्कूल, कॉलेज में नाटकों का आयोजन करते थे, अभिनय भी करते थे। इसी प्रकार स्टूडेंट यूनियन आदि के माध्यम से राजनीति में भाग लेकर वे राजनीतिक जीवन में भी प्रवेश कर चुके हैं। तभी तो उन्होंने अपनी रचनाओं में राजनीति के प्रति आक्रोश व्यक्त किया है।

3 दिसंबर, सन 1972 को यह जीवंत कलाकार अनेक आधे-अधूरे सपने एवं रचनाएँ छोड़कर हृदघात के कारण परलोकवासी हो गए ।

कृतित्व

कहानीकार के रूप में मोहन राकेश 'मलबे का मालिक' जैसी कहानियाँ परम्परागत कहानी-साहित्य के अनुरूप ही है। कहानी के बाद वे उपन्यास रचना के क्षेत्र में आये। एक कुशल कलाकार रूप में नाटक , एकांकी और निबंध रचना अन्य साहित्यिक रूप को निर्माण करके अपना बहुमुखी प्रतिभा का परिचय दिया।

★ कहानी - साहित्य

जलंधर में अध्यापन करते समय मोहन राकेश ने 'लड़ाई' नामक कहानी रची, पर तब प्रकाशन न हो सका। उनकी मृत्यु के बाद उनकी कहानी 'सरिता' मासिक पत्रिका में प्रथम प्रकाशन मिल सका। मोहन राकेश के अनुसार उनकी प्रथम प्रकाशित कहानी 'भिक्षु' 'सरस्वती' पत्रिका में हुआ था। इस कहानी का प्रकाशन-काल सन 1946 में हुआ था। उन्हें कहानीकार के रूप में परिचित एवं साहित्य में प्रतिष्ठित कराना वाली उनकी पहली कहानी 'दोराहा' कहानी है। 1947 में 'सरिता' मासिक में प्रकाशित हुई थी।

राकेशजी की कहनियों में 'मलवे का मालिक', 'परमात्मा का कुत्ता', 'जानवर और जानवर', 'मिसपाल', 'एक और जिंदगी', 'मंदी', 'सुहागिनें', 'अपरिचित', 'नए बादल', 'जख्म', 'आदमी और दीवार', 'सोया हुआ शहर', आदि उनकी कहानियां है।

सुरेश सिन्हा के अनुसार - "राकेश की कहानियों को आदर्शवादी और यथार्थवादी दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।“

'जानवर और जानवर', 'फौलाद का आकाश', 'ग्लॉस टैक', 'जख्म', और 'सेफ्टी पिन' आदि कहानियाँ प्रतीकात्मक और जटिल वर्ग के अंतर्गत आती हैं। 'गुनाह-बेलज्जत', 'वासना की छाया में', 'शिकार' आदि कहानियाँ सेक्स संबंधित कहानी है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि राकेश की कहानियों में परम्परागत आधुनिक, अत्याधुनिक सभी प्रकार का स्वर स्पष्ट सुन पड़ता है। इस कारण कहनीकार के रूप में उन्हें प्रेमचंद और नवीनयुग की कड़ी कहा जाता है।

★ उपन्यास साहित्य

उपन्यासकार के रूप में राकेश को अधिक सफलता प्राप्त नहीं हो सकी, फिर भी उनके रचित उपन्यास का एक अलग महत्व है। स्वर्गीय राकेश जी ने 'स्याह और सफेद' उपन्यास ही सर्वप्रथम रचा था।

मोहन राकेश जी के उपन्यासों के नाम और उसके क्रम :-

- अँधेरे बंद कमरे - सन 1961 में प्रकाशित
- न आने वाला कल - सन 1968 में प्रकाशित
- अंतराल - सन 1972 में प्रकाशित

प्रथम उपन्यास 'अँधेरे बंद कमरे' में उन्होंने उच्च-मध्य वर्ग के वारेमें उनकी सांस्कृतिक संबंधों के बारे में, और टूटे, बिखरे सामाजिक संबंधों आदि का यथार्थ एवं सजीव चित्रण किया है। राकेश का दूसरा उपन्यास 'न आने वाला कल' अस्तित्ववादी जीवन-दर्शन पर आधारित है। अंतराल में राकेश जी ने सामाजिक मान्यताओं और संबंध के बारे में लिखा है।

★ निबंध साहित्य

मोहन राकेश ने अपने निबन्धों में गतिशील एवं परिवर्तनशील जीवन, उसके भाव-वोध को अंकित करने का सफल प्रयास किया है।

राकेश जी के प्रकाशित निम्न रचनाएँ उल्लेखनीय है :-

• परिवेश • रंगमंच और शब्द • साहित्यकार की समस्याएं

★ यात्रा-विवरण और संस्मरण

अपने शैशव काल से ही राकेश रंगीन मिजाज तो रहे ही, साथ ही वह घुमक्कड़ी भी है। इन्होंने पश्चिमी समुद्र-तट के साथ कन्याकुमारी तक यात्राएँ की थी। उन्होंने इस प्रकार की यात्राओं में प्रकृति एवं जीवन का जिस प्रकार अनुभव किया, उन सबका वर्णन हमें उनके द्वारा प्रस्तुत यात्रा-विवरणों, संस्मरणों और आत्मकथा आदि मिलता है।

- आखरी चट्टान तक
- पतझड़ का रंगमंच
- ऊंची झील
- व्यक्तिगत-आत्मकथा (डायरी रूप में)
- रिपोतार्ज - 'सतयुग के लोग '

★ नाटक और एकांकी - साहित्य

मोहन राकेश सन 1947 से ही एक समर्थ कहानीकार के रूप में प्रतिष्ठा पा चुके थे। फिर भी देश-विदेश में उन्हें नाटककार के रूप में जानते है। राकेश के नाटक अधिकांश ऐतिहासिक है, उससे भी कहीं अधिक आधुनिक है।

राकेश जी के नाटक और एकांकी के नाम और उसके क्रम :-

- आषाढ़ का एक दिन - सन 1958 में प्रकाशित
- लहरों के राजहंस - सन 1966 में प्रकाशित
- आधे-अधूरे - सन 1969 में प्रकाशित
- अंडे के छिलके, अन्य एकांकी तथा बीज नाटक - 1973 मृत्यु के बाद प्रकाशित।

लिज़ा मिश्र, +3 तृतीय वर्ष

ईद मुसलमानों का सर्वप्रमुख त्योहार है। इस त्योहार को ईद-उल-फितर के नाम से भी जाना जाता है। यह त्योहार रमज़ान के महीने के त्याग और व्रत के उपरांत आता है। इस दिन चारों और ख़ुशी और मुस्कान छाई रहती है।

रमजान का पूरा महीना व्रत का महीना होता है। हर मुसलमान रोजे रखता है। दिन में कुछ खाता है, ना पानी पीता है। सूर्यास्त से सूर्योदय के बीच ही खाया-पीया जाता है। पर बच्चों और बीमार लोगों को व्रत से छूट दे दी गई हैं। बच्चे बड़े होकर यह व्रत कर सकते हैं।

रमजान का पावन महीना जैसे बीतता जाता है लोगों की उत्कंठा बढ़ती जाती है। सब कहते है ईद कब आएगी। उनका उत्साह थमने का नाम नहीं लेता।

आखिर में आसमान में ईद के चाँद के दर्शन हुए और शाही ईमाम ने ईद की घोषणा कर दी। घर घर में सेवईं बनाने की तैयारी होने लगती है। बच्चे, बुजुर्ग सब मस्जिद जाने लगते है। मानव - मानव एक हुआ। प्रार्थना समाप्त होती है। लोग एक दूसरे से गले मिलते हैं। सब लोग अपने अपने ढंग से मनोरंजन करते हैं। हर कोई अपनी पसंद की चीजें खरीदते हैं, खाते पीते हैं। लोग एक दूसरे को अपने घर दावत पर बुलाते हैं।

हर कोई प्रसन्न रहता है। गरीब से गरीब आदमी भी ईद को पूरे उत्साह से मनाता है।दुख और पीड़ा पीछे छूट जाती है। अमीर गरीब का अंतर मिट जाता है।

खुदा के दरबार में सब एक हैं, अल्लाह की रहमत हर एक पर बरसती है। अमीर खुले हाथों से दान देते हैं। यदि कोई असहाय है तो उसकी सहायता करो। यही धर्म है, मानवता है। ईद सबके साथ प्रेम करने तथा अपने सुख दुख को बांटने का संदेश देता है।

कादम्बिनी पंडा, +3 तृतीय वर्ष

जीवन में महत्वपूर्ण क्या है?

एक आदमी काम से देर से थका हुआ घर पर आया था, वह थोड़ा गुस्से में था जहां घर के दरवाजे पर उनका बेटा उनकी राह देख रहा था।

बेटा- पिताजी क्या में आपसे एक सवाल कर सकता हूँ ?

पिताजी- “हाँ बिलकुल, पूछो क्या पूछना है?” उस आदमी ने जवाब दिया।

बेटा- “पिताजी एक घंटे में आप कितने कमाते हो?”

पिताजी- बेटा, ये तुम्हारा काम नहीं है। तो तुम ऐसे सवाल कयू पुंछ रहे हों?” उस आदमी ने गुस्से में कहा।

बेटा- “मैं ये सब जानना चाहता हूँ, कृपया मुझे बताइए, की आप एक घंटे में कितना कमाते हैं?"

पिताजी- “अगर तुम्हें जानना ही है तो सुनो, मैं एक घंटे में 1000 रुपये कमाता हूँ।

बेटा- “अच्छा!" उस छोटे बच्चे ने अपना सर नीचे करते हुए जवाब दिया।

बेटा- “पिताजी, क्या मैं 500 रुपये उधार ले सकता हूँ?”

उस समय पिता बहुत क्रोधित हो चुके थे, “अगर ये सब पूछने के पीछे तुम्हारा यही कारण होगा कि तुम्हें कुछ बेमतलब के खिलौने और दुसरी बेतुकी चीजें खरीदनी है, तो चुपचाप सीधे-सीधे अपने कमरे में चले जाओ।“ वह छोटा लड़का बिना कुछ बोले सीधे अपने कमरे में चला गया और दरवाजा बंद कर दिया।

पिता ने सोचना शुरू किया, कि कहीं सही में तो उसे कोई कीमती या बहुत जरूरी चीज को खरीदने के लिए तो 500 रुपये की जरूरत तो नहीं है। वे अपने बेटे के कमरे में जाकर नम्रता से अपने बेटे से पूछ्ते हैं, “बेटे क्या तुम सो गये हो?"

बेटे ने जवाब दिया, “नहीं पिताजी।“ पिता ने अपनी गलती मानते हुए कहा कि, “मुझे ऐसा लगता है कि कुछ देर पहले मैंने तुम पर कुछ ज्यादा ही गुस्सा कर दिया था। ये रहे 500 रुपये जो तुम्हें चाहिए थे।“

तभी वह छोटा बच्चा मुसकुराया और कहा, “धन्यवाद पिताजी! वह बहुत खुश था। तभी वह अपने तकिये के पास गया और उसने कुछ टूटे-फूटे पुराने बिल्स निकाले जिसमें पहले से ही उसके पैसे रखे हुए थे। बच्चे के पिता ने देखा की उसके पास पहले से पैसे थे। बच्चे ने धीरे-धीरे अपने पैसे गिनने शुरू किये और अपने पिता की और देखने लगा। तभी पिता ने गुस्से में पूछा की, “जब तुम्हारे पास पहले से ही कुछ पैसे है तो तुम्हें और पैसे क्यों चाहिए?"

इस पर बेटे ने जवाब दिया की, “तब मेरे पास पर्याप्त पैसे नहीं थे, लेकिन अब मेरे पास पर्याप्त पैसे है।"

बेटे ने बड़े प्यार से कहा की, पिताजी, अभी मेरे पास 1000 रुपये हैं। क्या मैं आपके समय में से 1 घंटा खरीद सकता हूँ? कृपया कल 1 घंटा पहले घर आना। मुझे आपके साथ खाना खाना है।“

ये सुनते ही पिताजी सुन्न पड़ गये। उन्होंने तुरंत अपने बेटे को गले लगाया और अपनी गलतियों के लिए बेटे से माफी माँगी।

हमें जीवन में यही बताया जाता है कि, जीवन में कठिन परिश्रम करना चाहिए। और हम जीवन में यही करते चले जाते हैं। लेकिन जीवन में उन लोगों को समय देना बहुत जरूरी होता है जो हमारे जीवन में बहुत ज्यादा मायने रखते हैं। कभी-कभी काम करते समय हम उन लोग को भुल जाते हैं। हमें उन लोग को थोड़ा तो भी समय देते रहना चाहिए जो लोग हमारे दिल के करीब है।

आपका अपने करीबियों को दिया हुआ एक पल, आपको भविष्य में निश्चित ही सहायक साबित हो सकता है।

कई बार समय ना होने की वजह से हमारे करीबी ही हमसे दूर हो जाते हैं, और एक समय ऐसा आ जाता है जब जीवन में हम अकेले होते हैं, और लोगों को देखकर खुद पर तरस खाने लगते है।

शरीफा शरवारी, +3 प्रथम वर्ष

हमारी जिंदगी में पहले भगवान माता पिता हैं। माँ हमको अगर संस्कार की शिक्षा देती हैं तो पिता जीवन जीने की। पिता एक ऐसी शख्स हैं जिनकी वजह से हम जीवन की हर खुशी को महसूस कर सकते हैं। एक पिता ही है जो हमारी हर खुशी, हर ख्वाहिश को पूरी करते हैं। चाहे उन्हें कितना दर्द कितनी तकलीफें क्यों न सहना पड़े। हमें यह नहीं पता होता है कि वे हमारे लिए कितने कष्ट कितनी पीड़ा सहते हैं।

पापा हमारी पहचान है। पापा हमारी हिम्मत है, हौसला है। मेहनत करने वाले एक सच्चे इन्सान हैं। हम जिंदगी में बहुत सी गलतियां करते हैं। और गलत राह पर चलते हैं। पर इस दुनिया में एक माता पिता ही हैं जो हमारी सारी गलतियां माफ कर देते हैं। और जीवन में सच्चे इंसान बनने के लिए ओर सही राह पर आगे बढ़ जाने के लिए हौसला देते हैं।

पिता जो अपने परिवार को जोड़े रखने के लिए और अपने बच्चों के चेहरे पर मुस्कुराहट लाने के लिए वे सारे कष्ट, पीड़ा को सहन करते हैं। वे कड़ी मेहनत करके हमारी हर ख्वाहिश हर मंजिल को पाने में हमारी सहायता करते हैं।

जीवन में अगर कोई मुसीबत आए तो माँ अपने कष्ट अपनी पीड़ा को मिटाने के लिए आंसू बहाती है। लेकिन एक पिता सभी कष्ट, पीड़ा को सहन करते हैं और अपने आंसुओं को छिपाए रखते हैं। वे जीवन के इस राह में खुद हार कर हमें जीत की मंजिल दिखाते हैं।

मैं अपने पापा से बहुत प्यार करती हूं। क्योंकि वे मेरे लिए भगवान से बढ़कर हैं। वे अपने जीवन से ज्यादा हमें प्यार करते हैं, हमारी परवाह करते हैं। हमारे जीवन में जितनी भी मुसीबतें आई हैं वे हमें कभी टूटने नहीं देते हैं। वे हमेशा उन मुसीबतों का सामना करने के लिए हमें हौसला दिलाते हैं और हमेशा हमारे साथ खड़े रहते हैं। वो पापा ही है जो जिंदगी जीने की तरीका सिखाते हैं।

सोनिआ नायक, +3 तृतीय वर्ष

पावन गंगा

अविरल, कोमल, निर्मल, चंचल
गंगा का यह पावन जल
थोड़ा चंचल, थोड़ी शीतल
गंगा का यह पावन जल
जो दरिया मिल जाए इसमें,
वह भी गंगा का पावन जल
कभी न शाँत है
चले यह हर पल!
गंगा का यह पावन जल,

कलकाते की गरिमा
काली की महिमा
है गंगा का पावन जल
देश--देश से आये वासी
देखने गंगा का पावन जल
पाकर यह गंगा का पावन जल
अविरल, कोमल, चंचल, निर्मल
गंगा का यह पावन जल।

सोनाली सेठी, +3 तृतीय वर्ष

अहंकार

हममें से ज्यादातर लोगों ने अहंकार के बारे में सुना है। ये एक ऐसी चीज़ है जो मानव को ऊपर उठाकर नीचे गिरा सकता है। हमारे जीवन को नियंत्रित करता है, और हमें इस बात का पता भी नहीं चलता। लेकिन हममें से कुछ लोग इस अहंकार की गहराई को जानते हैं। यह हमारे व्यक्तित्व का छोटा, कम परिपक्व और रक्षात्मक भाग है जो हर छोटी चीज पर व्यक्तिगत रूप से प्रतिक्रिया देता है। यह वर्तमान का विरोध कर हमें नुकसान पहुंचाता है। चाहे यह ऊंचा बोलने और मांग करने वाला या धीमा या नरम बोलने वाला हो, हमारा अहंकार हमें यह समझाने में खुद को थकाता है कि हमारे पास चिंता करने और योजना बनाने के लिए बहुत सारी आवश्यक चीजें हैं और हमें अपना कीमती समय बेवकूफी भरे और उबाऊ कर देने वाले वर्तमान में नहीं व्यर्थ करना चाहिए। लेकिन इन सभी धमकियों के नीचे, अहंकार वर्तमान को जीवन को नुकसान पहुंचाने वाली विपत्ति मानता है। अहंकार का काम है किसी भी मूल्य पर हमारे जीवन की रक्षा करना। एक सुरक्षा प्रबंधक के तौर पर यह अपना काम काफी गंभीरता से लेता है। यह खुद की मदद नहीं कर सकता लेकिन इसकी अपनी समझ के अनुसार यह डर और वास्तविकता के बीच का फर्क नहीं समझ सकता है। अगर अहंकार खुद को इस बात के लिए मना ले कि हो सकता है हमें हमारा प्रिय तकलीफ दे, तो यह अपनी पूरी ताकत लगाकार उस रिश्ते को बर्बाद या नष्ट कर देता है। अहंकार के वफादार सैनिकों की रैली में डर, चिंता, संदेह, निर्णय और निराशा है, जो इसे इसकी नवीनतम चोरी की ओर खींचते हैं। याद रहे कि केवल सुरक्षा (प्यार और खुशी नहीं) ही अहंकार का एकमात्र लक्ष्य है। संभावित चोट से हमें बचाने के लिए यह सारी बाधाओं को खत्म कर देता है।

सोनाली राउत, +3 तृतीय वर्ष

आपकी बात

कमला नेहरू महिला महाविद्यालय भुवनेश्वर की हिंदी ई-पत्रिका के मई अंक को पढ़ने के बाद मैं संपादक मण्डल को बधाई देना चाहता हूँ कि उन्होंने इस पत्रिका में छात्राओं के विचार एवं रचनाओं को सम्मलित करने के साथ साथ हजारी प्रसाद द्विवेदी और प्रेमचंद की कहानियों को भी सम्मिलित किया। महिला सशक्तिकरण के तहत प्रभा खेतान जैसी दबंग प्रतिभा के बारे में जानकारी देकर महिलाओं का आत्मविश्वास बढ़ाया है।

मैं आशा करता हूँ कि आने वाले समय में संपादक मंडल इसी प्रकार हमारा ज्ञान वर्धन करेगा और विश्वास बनाये रखेगा।

किशन खंडेलवाल

कवि

भुवनेश्वर।

कमला नेहरू महिला महाविद्यालय, भुबनेश्वर की हिंदी पत्रिका “हिंदी भारती” हेतु हिंदी विभाग को उनकी पत्रिका के ऑनलाइन संस्करण को प्रकाशित करने में नवीन और उत्कृष्ठ पहल करने के लिए हार्दिक बधाई। डॉ. वेदुला रामालक्ष्मी मैडम और विभाग के अन्य संकाय सदस्यों का अभिवादन, जो छात्राओं में निहित साहित्यिक रुचियों को परिष्कृत कर अभिव्यक्त करने हेतु प्रेरित कर रहें हैं।वास्तव में पत्रिका का प्रकाशन अत्यंत सफल रहा, और इसके लिये हिंदी विभाग

प्रशंसा का हकदार है। मैं उन लोगों के लिए शुभकामनाएं देती हूं जो साहित्य के लिए ऐसी महान सेवा प्रदान कर रहे हैं। मैं आने वाले नए अंक की प्रतीक्षा कर रही हूँ।

डॉ. स्वर्णमयी पुरोहित

व्याख्याता, अंग्रेजी विभाग

लक्ष्मी नारायण महाविद्यालय

झारसुगुड़ा

कमला नेहरू महाविद्यालय की ई पत्रिका' हिंदी भारती' के समयोचित चिंतन एवं प्रकाशन के अभिनंदनीय पहल के लिए संपादकों को वंदन अभिनदंन। आज 'हिंदी की सेवा भी देश सेवा' का कार्य है। हिंदी लेखन के लिए एक सशक्त मंच प्रदान कर विद्यार्थिनियों के भावों की अभिव्यक्ति को उड़ान मिलती रहे, हिंदी की सेवा अविरल चलती रहे यही शुभ कामना है।

धर्मिष्ठा अजय सेंगर

कार्यकारिणी सदस्य ,

राष्ट्रभाषा प्रचार सामिति, वर्धा।

अध्यक्ष,

महाकौशल राष्ट्रभाषा प्रचार सामिति, गोंदिया ।

शिक्षा का अर्थ है उस पूर्णता को व्यक्त करना,जो सब मनुष्यों में पहले से ही विध्यमान है। और फिर जब स्वयं को अभिव्यक्त करने के लिए,एक अपना मंच और अपने पथप्रदर्शक हो,तब मन के भाव सहज ही शब्दों के मोती बन जाते हैं।

ढ़ेरों किताबों की सामग्री,एक ही संकलन में,पाठकों तक सम्प्रेसित करती ये ई-पत्रिकाएँ,निःशुल्क,सहज ही आपके स्मार्ट फोन पर उपलब्ध है और आपके word file में हमेशा के लिए सुरक्षित। कभी भी,कहीं भी बैठकर,आप इनका आनन्द ले सकते हैं- ये तकनिकी

विशेषता है और इसे संकलित कर,अपना समय,अपना अनुभव,अपना मन-मष्तिष्क और अपना हृदय खोलकर,शब्दों को गढ़ने वाले ,उन युवाओं को प्रोत्साहित करने वाले,सम्पादकीय टीम के लिए,अज्ञेय की इन पंक्तियों से अधिक प्रासंगिक और क्या हो सकता है-

सागर के किनारे तक

तुम्हें पँहुचाने का

उदार उद्यम ही मेरा हो:

फिर वहाँ जो लहर हो,तारा हो,

सोन तरी हो,अरूण सवेरा हो,

वह सब,ओ मेरे वर्य !

तुम्हारा हो,तुम्हारा हो,तुम्हारा हो।

श्रीमती रितु डागा

लेखिका एवं साहित्य प्रेमी

रायपुर, छत्तीसगढ़

आपकी पत्रिका गागर में सागर भरने के समान हैं,कम शब्दों में बहुत कुशलता से आप काफी सारे विषयों को समाहित कर हमें संस्कृति और ज्ञान के अनूठे सफ़र पर ले जाते हैं ।आज जहाँ एक ओर विदेशी भाषा को कहना पढना गौरव समझा जाता हैं वह क्षेत्रीय और राष्ट्र भाषा दोनों ही अपने अस्तित्व के लिए जूझ रहे हैं वहाँ आपका यह कदम सराहनीय हैं।आपको ढेरों बधाइयाँ और शुभकामनाएं

चंचल दुआ

व्याख्याता, अंग्रेजी विभाग

पी. जी. स्नातक महाविद्यालय

सुंदरगढ़

मन्नू भंडारी से साक्षात्कार

भाग - 1

https://youtu.be/zc1oxFH3POQ

भाग - 2

https://youtu.be/H5HPUVGoMAQ

यादों के गलियारों से

विश्व पर्यावरण दिवस

एक मुलाकात डॉ. शंकरलाल पुरोहित जी के साथ

अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस

धन्यवाद